महोपाध्याय समयसुन्दर रचित

अष्टलक्षीः एक परिचय

म० विनयसागर

सरस्वतीलब्धप्रसाद महोपाध्याय कविवर **समयसुन्दर** के नाम से कौन अपरिचित होगा ? १७वीं शती के उद्भट विद्वान में इनकी गणना की जाती है। ये न केवल जैनागम, जैन साहित्य और स्तोत्र साहित्य के ही धुरन्धर विद्वान थे, अपितु व्याकरण, अनेकार्थी साहित्य, लक्षण, छन्द, ज्योतिष, पादपूर्ति साहित्य, चार्चिक, सैद्धान्तिक, रास साहित्य और गीति साहित्य के भी धुरन्धर विद्वान थे।[१] राजस्थान में इनके लिये यह उक्ति प्रसिद्ध है – **महाराणा कुम्भा रा भीतड़ा अर समयसुन्दर रा गीतड़ा।**

कविवर सम्राट अकबर प्रतिबोधक और तत्प्रदत्त युगप्रधान पदधारक श्री जिनचन्द्रसूरिजी के प्रथम शिष्य श्रीसकलचन्द्र गणिजी के शिष्य थे। कवि का जन्म विक्रम संवत् १६१० के लगभग सांचोर में हुआ था। यो प्राग्वाट् जाति के थे और उनके माता-पिता का नाम लीलादेवी और रूपसी था। विक्रम संवत् १६२८-३० के मध्य में इनकी दीक्षा हुई होगी। इनकी शिक्षा-दीक्षा वाचक महिमराज (श्रीजिनसिंहसूरि) और समयराजोपाध्याय के सान्निध्य में हुई थी। इनका स्वर्गवास विक्रम संवत् १७०३ चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन अहमदाबाद में हुआ था। इनकी विशाल शिष्य-प्रशिष्य परम्परा भी २०वीं शताब्दी तक विद्यमान थी।

कविवर को गणिपद गणनायक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी ने ही विक्रम संवत् १६४१ में प्रदान कर दिया था। सम्राट अकबर को अपनी धर्मदेशना से प्रतिबोध देने के लिए जब आचार्य जिनचन्द्रसूरि लाहौर पधारे थे उस समय समयसुन्दरगणि भी साथ में थे। सम्राट अकबर ने जब भी जिनचन्द्रसूरि को युगप्रधान पद और वाचक महिमराज (जिनसिंहसूरि) को आचार्य पद दिया था, उस समय महामन्त्री कर्मचन्द बच्छावत कृत संस्मरणीय महोत्सव के समय ही जिनचन्द्रसूरिजी ने अपने करकमलों से समयसुन्दर को वाचनाचार्य पद से अलंकृत किया था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूर्ववर्ती कवियों द्वारा सर्जित द्विसन्धान, पञ्चसन्धान, चतुर्विंशति सन्धान, शतार्थी, सहस्रार्थी कृतियाँ तो प्राप्त होती हैं, जो कि उन कवियों के अप्रतिम वैदुष्य को प्रकट करती हैं, किन्तु समयसुन्दर ने 'एगस्स सुत्तस्स अणंतो अत्थो' को प्रमाणित करने के लिए 'राजानो ददते सौख्यम्' इस पंक्ति के प्रत्येक अक्षर के व्याकरण और अनेकार्थी कोषों के माध्यम से १-१ लाख अर्थ कर जो अष्टलक्षी / अर्थरत्नावली ग्रन्थ का निर्माण किया, वह तो वास्तव में बेजोड़ अमर कृति है। समस्त भारतीय साहित्य में ही नहीं अपितु विश्वसाहित्य में भी इस कोटि की अन्य कोई रचना प्राप्त नहीं हैं।

'राजानो ददते सौख्यम्' पद के प्रत्येक अक्षर के लाखों अर्थ करने के लक्ष्य / प्रयोग को ध्यान में रखकर कवि ने अनेक ग्रन्थो एवं ग्रन्थकारों का उल्लेख करते हुए उदाहरण भी प्रस्तुत किये हैं। जिनमें से उल्लेखनीय कतिपय नाम इस प्रकार हैं :-

जैनागमों में - आवश्यक निर्युक्ति, आवश्यक सूत्र बृहद्वृत्ति, स्थानांग सूत्र, जयसुन्दरसूरि कृत शतार्थी; पुराणों में - स्कन्दपुराण, महाभारत, व्याकरण ग्रन्थों में - सिद्धहेम शब्दानुशासन - बृहन्न्यास - बृहद्वृत्ति - सारोद्धारकक्षपुट, पाणिनीय धातुपाठ, अव्ययवृत्ति व्याख्या, कालापक व्याकरण, सारस्वत व्याकरण, विष्णुवार्तिक; लक्षण ग्रन्थों में काव्यप्रकाश, रुद्रटालङ्कार टीका, वाग्भटालङ्कार, काव्यकल्पलता वृत्ति; काव्य ग्रन्थों में - नैषध काव्य, कुमार सम्भव काव्य, मेघदूत काव्य, खण्डप्रशस्ति, चम्पूकथा, नीतिशतक; कोष ग्रन्थों में - अमरकोष, अभिधान चिन्तामणि नाममाला, धनञ्जय नाममाला; एकाक्षरी एवं अनेकार्थी कोषों में - अनेकार्थ संग्रह, विश्वशम्भु नाममाला, सुधाकलशीय एकाक्षरी नाममाला, अनेकार्थ तिलक, कालिदासीय एकाक्षरी नाममाला, वररुचिकृत एकाक्षर निघण्टु; ज्योतिष में रत्नकोष आदि अनेक ग्रन्थों के उदाहरण दिये हैं।

इस ग्रन्थ के रचना प्रसंग के सम्बन्ध में कवि ने स्वयं लिखा है[२] :-

सं. १६४९ श्रावण सुदि १३ पातिशाह अकबर ने काश्मीर विजय करने के उद्देश्य से प्रयाण किया। पहले दिन का डेरा राजा रामदास के बगीचे में डाला। उसी दिन संध्या के समय जहांगीर, सामन्त, मण्डलीक राजागण तथा व्याकरण एवं तर्कशास्त्र के विद्वानों की उपस्थिति में सम्राट अकबर ने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिनचन्द्रसूरि को जिनसिंहसूरि आदि प्रमुख शिष्यवृन्द के साथ बड़े सम्मान के साथ बुलाकर यह अष्टलक्षी ग्रन्थ मेरे (समयसुन्दर) से दत्तचित्त होकर सुना। यह ग्रन्थ सुनकर पातिशाह अकबर हर्ष से विभोर एवं गद्गद् होकर इसकी अत्यन्त प्रशंसा करते हुए कहा कि - इस ग्रन्थ का पठन-पाठन सर्वत्र विस्तृत हो। ऐसा कहकर यह ग्रन्थ स्वयं के हाथ में लेकर मुझे प्रदान कर इस ग्रन्थ को प्रमाणीकृत किया।

इस ग्रन्थ का रचना स्वरूप इस प्रकार है :-

प्रणाली - मंगलाचरण में सूर्य एवं ब्राह्मी देवता को नमस्कार किया है-

१,००४ - राजा नो, राजा आनो, रा अज अ अ नः, रा अजा नो, राज आ नो राजाना उ. राजाव् नो राजाय् नो, ऋ आजा नो इस प्रकार राजानो शब्द के अर्थ किये हैं।

८७५ - राजा के 'अ' को सम्बोधन बनाकर नो दद अनोदद आनोदद पद के ८७५ अर्थ किये हैं।

३,४२० - 'दद' शब्द को सम्बोधन बनाकर 'ददादद' पद के ३४२० अर्थ किये है। इस प्रकार ८७५ और ३४२० अर्थ कुल ४२९५ अर्थ नोदद के होते हैं।

पश्चात् 'ते' शब्द को तृतीया, चतुर्थी, प्रथमा, पञ्चमी, षष्ठी विभक्त्यर्थ ग्रहण किया है। अर्थात् ४२९५ अर्थों के 'ते' की प्रत्येक विभक्ति से पांच वार गुणित करने पर २१४७५ अर्थ हो जाते हैं।

२१,४७५ - साथ ही यह भी संकेत किया है कि राजन् शब्द के यक्षवाचक और सूर्यवाचक अर्थ भी किये जाय।

७० - पुनः प्रकारान्तर से 'दद' शब्द को दानदायक अर्थ में नञ् समास पूर्वक ७० अर्थ किये हैं।

५७ - पुनः केवल 'द' शब्द के ५७ अर्थ किये हैं।

४,०६० - इसके पश्चात् लेखक का कथन है कि दानदायक 'दद' पद के केवल नञ् समास पूर्वक जो ७० अर्थ हैं, उस प्रत्येक एक अर्थ को 'द' शब्द के ५७ अर्थों में प्रयुक्त करे। अर्थात् ७० को ५७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से गुणित करने पर ३९९० अर्थ होते हैं। इनके साथ शुद्ध दानदायक 'दद' के ७० अर्थ स्वतन्त्र रूप से सम्मिलित करने पर कुल ४०६० अर्थ होते है।

२५,५३५ - इस प्रकार 'नोदद' 'अनोदद', 'आनोदद' तथा 'ददादद' के २१४७५ अर्थों के साथ 'दद' 'द' के ४०६० अर्थ मिलाने पर कुल २५५३५ अर्थ हो जाते हैं।

१० - सौख्यं पद के १० अर्थ हैं। प्रत्येक अर्थ को २५५७५ के साथ

२,५५,३५० संयुक्त करने पर अर्थात् दश गुणित करने पर कुल अर्थ २,५५,३५० अर्थ हो जाते हैं।

२ - पश्चात् २,५५,३५० अर्थों को नञ् समास पूर्वक करने पर अर्थात्

५,१०,७०० सुख शब्द दुःखार्थ में परिणत हो जाता है। सौख्यं - असौख्यं अर्थ होने पर द्विगुणित हो जाते हैं अतः कुल अर्थ ५,१०,७०० हो जाते हैं।

२ - इन अर्थों को काकूक्ति के अर्थ में ग्रहण करने पर द्विगुणित हो

१०,२१,४०० जाने से १०,२१,४०० अर्थ हो जाते हैं।

६ - पुनः ग्रन्थकार ने शृङ्खला नाम प्रश्नोत्तर जाति भेद से **राजा जानो नोद दद दते ते असौ सौखी अग्** पदार्थ से ६ अर्थ किये हैंङ्।

१०,२१,४०६

१,००० - यहां कवि ने निर्देश किया है कि प्रारम्भ में जो राजानो शब्द के १००० (वस्तुतः १००४ अर्थ हैं) अर्थ इसमें सम्मिलित किये जायँ।

१०,२२,४०६

१ - अन्त में एक अर्थ अकबर का किया है वह इस प्रकार है :-

राजा के र अ अज अ आ खण्ड कर

र - श्री (पंक्तिरथ न्याय से)

अ - अ

अज - क (ब्रह्म का पर्याय)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अ - ब (वायु का पर्याय व बवयोः ग्रहण कर)
आ - र (अग्नि का पर्याय)
इस तरह राजा शब्द का अर्थ श्रीअकबर बनता है ।

१०,२२,४०७

अन्त में कवि का कथन है कि २,२५,४०७ अर्थ जो अधिक हैं, ये अर्थ अष्टलक्षी में कहीं संभव नहीं हो, अथवा अर्थयोजना से मेल न खाते हो अतः इतने अर्थों का परित्याग कर देने पर ८,००,००० अर्थ अविघट एवं अविसंवादी रूप से शेष रहते हैं ।[३]

सम्राट अकबर की प्रशंसा करते हुए कवि कहता है कि न्यायी होने से प्रजा को सुखदायक है, परम कृपाशील है, तीर्थस्थानों का करमोचक है, षड्दर्शनियों का सम्मान करने वाला है, शत्रुञ्जयादि महातीर्थों की रक्षा करने वाला है, जैन आदि समस्त धर्मों का भक्त है तथा सब लोगों का मान्य है।

इस प्रकार गद्य में कहकर ८ श्लोकों में अकबर की गौरव प्रशस्ति दी है ।

'राजानो ददते सौख्यम्' पद की टीका होने के कारण कवि ने इस वृत्ति का नाम **अर्थरत्नावली** वृत्ति दिया है । इस पद्यांश के आठ लाख अर्थ होने के कारण इसका प्रसिद्ध नाम अष्टलक्षार्थी भी है ।

कवि ने इसके पश्चात् ३३ श्लोकों की विस्तृत रचना- प्रशस्ति में अपनी गुरु परम्परा दी है ।

इस ग्रन्थ को डॉ० हीरालाल रसिकदास कापड़िया ने सम्पादित कर **अनेकार्थरत्नमञ्जूषा** में विस्तृत भूमिका के साथ प्रकाशित किया है । यह ग्रन्थ श्रेष्ठि देवचन्द लालभाई जैन पुस्तकोद्धार संस्था सूरत की ओर से ईस्वी सन् १९३३ में प्रकाशित हुआ है । सम्पादक ने रचना-प्रशस्ति पद्य ३२ में **श्रीविक्रमनृपवर्षात्, समये रसजलधिरागसोम (१६४६) मिते** में रस शब्द को मधुरादि षड् रस मानकर छः की संख्या दी है जबकि यहाँ रस शब्द से शृङ्गारादि नवरसाः नौ अंक का ग्रहण किया जाना उपयुक्त है, क्योंकि प्रशस्ति पद्य २४-२५ के अनुसार सम्राट अकबर ने जिनचन्द्रसूरि को युगप्रधान पद १६४९ में ही दिया था । इसी ग्रन्थ के पृष्ठ ६५ तथा १५ वीं पंक्ति में संवत्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६४९ स्पष्ट लिखा है। अतः स्पष्ट है कि ग्रन्थ की रचना १६४९ श्रावण शुक्ला त्रयोदशी के पूर्व हुई है और प्रशस्ति की रचना ७ मास के पश्चात् ।

इस पुस्तक का प्रथम संस्करण सन् १९३३ में प्रकाशित हुआ था जो आज अप्राप्त है। श्रुतज्ञ विद्वानों के अध्ययन, पठन-पाठन एवं वैदुष्य प्राप्ति के लिए इस ग्रन्थ की महती उपयोगिता है, अतः साहित्यिक संस्थानों से मेरा अनुरोध है कि इसका सम्पादित द्वितीय संस्करण शीघ्र ही प्रकाशित करें।

टिप्पणी -

१. कवि के विशेष परिचय के लिए देखें - महोपाध्याय विनयसागरः महोपाध्याय समयसुन्दर
२. अनेकार्थरत्नमञ्जूषा पृष्ठ ६५
३. वही, पृष्ठ ६७
४. वही, पृष्ठ ७०

★

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org